25

''लाभ के पदों'' संबंधी संयुक्त समिति

लोक सभा सचिवालय
नई दिल्ली

टी. ओ. संख्या 91

मूल्य : 14.00 रु.

© 2014 लोक सभा सचिवालय

लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियम (पन्द्रहवां संस्करण) के नियम 382 के अधीन प्रकाशित और मै. जैनको आर्ट इंडिया, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

आमुख

यह सारांश संसदीय प्रक्रिया सारांश माला का भाग है और इसमें लाभ के पद संबंधी संयुक्त समिति की प्रक्रिया का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। यह लोक सभा के प्रक्रिया और कार्य-संचालन नियमों, प्रक्रिया नियमों के अंतर्गत अध्यक्ष द्वारा जारी निदेशों और पूर्व उदाहरणों पर आधारित है। यह संदर्शिका सुलभ संदर्भ के प्रयोजन के लिए है।

इस सारांश में दी गई जानकारी सम्पूर्ण नहीं है, अतः, पूर्ण जानकारी के लिए मूल स्रोतों का ही अवलोकन करें और उन्हीं को विश्वसनीय मानें।

नई दिल्ली;
अप्रैल, 2014
वैशाख, 1936 (शक)

पी. श्रीधरन,
महासचिव।

''लाभ के पदों'' संबंधी संयुक्त समिति

उद्भव

अधिकाधिक संख्या में विधानमंडल के सदस्यों को पदधारक बनाकर अनुचित माध्यम से लोकतांत्रिक सरकारों में विधानमंडल पर कार्यपालिका के नियंत्रण या प्रभाव को नियंत्रित करने की आवश्यकता के कारण विधानमंडल का सदस्य चुने जाने या सदस्य बने रहने हेतु सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करने वालों को निर्रह करने की अवधारणा का उद्भव हुआ। इसके अतिरिक्त किसी व्यक्ति द्वारा दो स्थानों पर उपस्थित होने की व्यावहारिक असमर्थता या उन पदों से संबद्ध अत्यधिक दायित्वों के कारण विधानमंडल की सदस्यता के साथ कतिपय पद धारित करना असंगत माना गया था। तथापि, कार्यपालिका और विधानमंडल के बीच प्रभावी समन्वय के मद्देनजर मंत्रियों तथा सरकार के अन्य सदस्यों के मामले में इसे अपवाद माना गया।

2. यूनाइटेड किंगडम और अमेरिका सहित सभी लोकतांत्रिक सरकार के अधीन पदधारकों को विधि के अनुसार विधानमंडल का सदस्य होने से निर्रह किया गया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 102(1) और 191(1) में किसी व्यक्ति को संसद या

विधान सभा के किसी भी सदन का सदस्य चुने जाने या बनने से निरर्ह करने का उपबंध है जो केन्द्र या राज्य के अंतर्गत कोई लाभ का पद धारित करते हों, जब तक कि संसद या राज्य विधानमंडल विधि द्वारा यह घोषित न कर दे कि ऐसा पद, धारक को निरर्ह नहीं करता।

यदि किसी संसद सदस्य का संविधान में अधिकथित निरर्हता के किसी विषय-वस्तु के अंतर्गत आने की स्थिति से संबंधित प्रश्न को चाहे भले ही वह लाभ का पद धारित करता है या नहीं, उत्पन्न होने पर उसे अंतिम निर्णय हेतु राष्ट्रपति के पास भेजा जाता है और उसका निर्णय अंतिम होता है। तथापि, ऐसे किसी प्रश्न पर कोई निर्णय लेने से पूर्व राष्ट्रपति को निर्वाचन आयोग की राय लेनी अपेक्षित है और वह उसी राय के अनुसार कार्य करेगा/करेगी। यहां यह जानना आवश्यक है कि राष्ट्रपति इस मुद्दे पर अपनी मंत्रिपरिषद की सलाह से कार्य नहीं करेगा/करेगी।

3. इस संवैधानिक उपबंध का अंतर्निहित उद्देश्य संसद सदस्यों या किसी विधानमंडल के सदस्यों की स्वतंत्रता निश्चित करना है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि संसद या राज्य विधानमंडल में ऐसे व्यक्ति न हों जिन्हें कार्यपालिका और सरकार से अनुग्रह या लाभ मिलता है और जो बाद में कार्यपालिका के दायित्व के अंतर्गत होने के नाते उसका प्रभाव सुवश्य हो सकता है। स्पष्ट रूप से

यह अनुबंध विधायकों के कर्त्तव्यों और स्वहित संबंधी विरोध के जोखिम को समाप्त करने या कम करने के लिए बनाया गया है।

4. कार्यकारी सरकार के पास सदस्य को किसी नियुक्ति, स्थिति या पद, जिसमें किसी न किसी प्रकार का पारिश्रमिक मिलता हो, की पेशकश करने संबंधी अबाधित शक्तियां होने की स्थिति में यह जोखिम रहता है कि वह सदस्य कार्यकारी सरकार के प्रति कृतज्ञ रहेगा/रहेगी और इस प्रकार वह अपने विचारों और कार्यों की स्वतंत्रता खो देगा/देगी तथा वह अपने निर्वाचकों का सच्चा प्रतिनिधि न रह पाएगा/पाएगी।

5. संसद अपने सदस्यों पर ऐसे कोई प्रतिबंध लगा सकती है जिन्हें वह आवश्यक समझती है परंतु वे विधान में अंतर्विष्ट होने चाहिए ताकि इससे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होने वाले इसकी व्याख्या सुलभता से कर सकें तथा वह सरलता से उपलब्ध हो।

6. यद्यपि, अनुच्छेद 102(1)(क) के उपबंधों के मद्देनजर संसद द्वारा कतिपय अधिनियमन पारित किए गए थे परंतु व्यापक रूप से यह महसूस किया गया कि कोई भी अधिनियम समय की मांग पर व्यापक रूप से खरा नहीं उतरा। इस पृष्ठभूमि में और संसद सदस्यों के प्रस्तुतीकरण के बाद अध्यक्ष, जी.वी. मावलंकर ने राज्य सभा के सभापति से परामर्श करके दिनांक 21 अगस्त, 1954

को पंडित ठाकुर दास भार्गव की अध्यक्षता में ''लाभ के पद'' संबंधी एक समिति गठित की जिसमें—

> ''सदस्यों की निरर्हता से संबंधित विभिन्न मामलों का अध्ययन और ऐसी सिफारिशें करने जिससे सरकार उन विषयों पर विचार करने में समर्थ हो ताकि सदन के समक्ष एक व्यापक विधान पेश किया जा सके, और तथ्य तथा आंकड़े एकत्रित करने और यह सुझाव देने कि मामले से कैसे निपटना चाहिए।''

7. भार्गव समिति की सिफारिशों के अनुसरण में सरकार ने 5 दिसम्बर, 1957 को संसद (निरर्हता निवारण) विधेयक पुर:स्थापित किया। इसे सदन की संयुक्त समिति को भेजा गया और 10 सितम्बर, 1958 को इसका प्रतिवेदन लोक सभा में पेश किया गया।

विधेयक, जिसे संसद द्वारा आगे संशोधित और पारित किया गया, पर राष्ट्रपति की अनुमति 4 अप्रैल, 1959 को मिली। संसद (निरर्हता निवारण) अधिनियम, 1959 में उल्लेख है कि किस पद के धारक संसद की सदस्यता से निरर्ह नहीं होंगे। इस अधिनियम में संक्षेप में उल्लेख है कि यदि एक सांविधिक या गैर-सांविधिक निकाय/कंपनी के सदस्य/निदेशक प्रतिकर भत्ते के अलावा कोई अन्य पारिश्रमिक पाने के पात्र नहीं हैं तो सदस्य इन भत्तों को पाने

के लिए निरर्ह नहीं होगा। उक्त अधिनियम की धारा 2(क) के अंतर्गत ''प्रतिकर भत्ते'' को दैनिक भत्ते (संसद सदस्य वेतन, भत्ता और पेंशन अधिनियम, 1954 के अंतर्गत संसद सदस्यों को देय दैनिक भत्ते की राशि ऐसे भत्ते से अधिक न हो), वाहन भत्ता, मकान किराया भत्ता या यात्रा भत्ता, जो सदस्य द्वारा उस पद के कार्यनिष्पादन के लिए किसी प्रकार के व्यय की प्रतिपूर्ति के प्रयोजन के लिए सदस्य को प्राप्य हैं, के रूप में 'एक पदधारी को देय धन' की राशि के रूप में परिभाषित किया गया है।''

8. प्रत्येक लोक सभा के कार्यकाल के दौरान लाभ के पदों संबंधी संयुक्त समिति का गठन संसद (निरर्हता निवारण) विधेयक, 1957 के संबंध में संयुक्त समिति द्वारा सभी समितियों और परवर्ती समितियों की संरचना और प्रकृति की जांच के लिए किया गया था। लाभ के पदों संबंधी पहली संयुक्त समिति का गठन दूसरी लोक सभा के दौरान अगस्त, 1959 में किया गया था। इसके पश्चात् संयुक्त समिति का गठन जून, 1962 (तीसरी लोक सभा); जून, 1967 (चौथी लोक सभा); जुलाई, 1971 (पांचवीं लोक सभा); दिसम्बर, 1980 (सातवीं लोक सभा); मई, 1985 (आठवीं लोक सभा); मई, 1980 (नौवीं लोक सभा); सितंबर, 1991 (दसवीं लोक सभा); अगस्त, 1996 (ग्यारहवीं लोक सभा); जुलाई, 1998 (बारहवीं लोक सभा); दिसम्बर, 1999 (तेरहवीं लोक सभा); अगस्त, 2004 (चौदहवीं लोक सभा);

और दिसम्बर, 2009 (पन्द्रहवीं लोक सभा) में किया गया। तथापि, छठी लोक सभा में ऐसी किसी समिति का गठन नहीं हुआ।

9. संसद (निरर्हता निवारण) अधिनियम, 1959 में संशोधन वर्ष 1993, 1999, 2000, 2006 और 2013 में किया गया था। तत्कालीन राष्ट्रपति ने संविधान की धारा 111 को लगाते हुए विधेयक को संसद के पुनर्विचारण हेतु भेज दिया था। उक्त विधेयक पर पुन: विचार करते हुए सभा के पटल पर आश्वासन दिया गया था कि माननीय राष्ट्रपति के संदेश में उठाए गए विभिन्न मुद्दों की जांच संसद की दोनों सभाओं की संयुक्त समिति करेगी। तद्नुसार, 15 संसद सदस्यों (10 लोक सभा और 5 राज्य सभा) वाली संयुक्त समिति का गठन 18 अगस्त, 2006 को लाभ के पद से संबंधित संवैधानिक और कानूनी स्थिति की जांच करने के लिए किया गया था। समिति द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ कतिपय टिप्पणियां की गईं और संविधान के अनुच्छेद 102(1) में संशोधन की सिफारिश की जिसमें संसद सदस्यों को चुने जाने और कतिपय विनिर्दिष्ट और सुपरिभाषित स्थितियों में संसद के किसी सभा का सदस्य होने से निरर्ह करने का उल्लेख है। समिति द्वारा अनुच्छेद 191(1)(क) में संशोधन (राज्य विधानमंडल के सदस्यों के लिए) इसी तर्ज पर भी सुझाया गया था ताकि मामलों में एकरूपता बनाई जा सके। समिति ने संसद को अपनी रिपोर्ट 22 दिसम्बर, 2008 को प्रस्तुत की थी। समिति की सिफारिशें भारत सरकार को आवश्यक कार्रवाई के लिए अग्रेषित की गई थीं।

6

लाभ के पद की अवधारणा

10. सामान्य शब्द में 'पद' का अर्थ ''सरकारी या निजी नियोजन का एक अधिकार एवं इसके अंतर्गत शुल्क और परिलब्धियां लेने से है'' विस्तार से कहें तो एक पद में कार्यकाल के तत्व, अवधि, कर्त्तव्य और परिलब्धियां शामिल होती हैं किंतु परिलब्धियों के तत्व पद के लिए आवश्यक नहीं हैं।

11. लाभ को परिभाषित करना ज्यादा कठिन है। लाभ में सामान्यत: किसी प्रकार का फायदा, हित या उपयोगी परिणाम निहित है। सामान्यत: इसका अर्थ धन से जुड़े फायदे से लगाया जाता है लेकिन कुछ मामलों में धन से जुड़े फायदे के अलावा अन्य लाभ भी इसके अंतर्गत आते हैं। 'लाभ का पद' ऐसा पद है जिसमें शक्तियों का संरक्षण निहित होता है अथवा जहां पदधारक कार्यकारी शक्तियों का उपयोग करने में समर्थ होता है या जिसमें पदधारी की गरिमा, प्रतिष्ठा या मर्यादा निहित होती है।

12. ''लाभ के पद'' की अभिव्यक्ति को संविधान या लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 या संसद (निरर्हता निवारण) अधिनियम, 1959 में परिभाषित नहीं किया गया है क्योंकि सरकार के अंतर्गत और इसके पश्चात् सृजित होने वाले सभी प्रकार के पदों को लेकर सर्वग्राही परिणाम बनाना आसान नहीं है। यह मुख्यत:

दर्शाता है कि सरकार को ऐसी स्थिति में नहीं होना चाहिए कि जहां एक सदस्य को दूसरे सदस्य के स्थान पर प्रतिस्थापित कर प्राधिकार का उपयोग किया जा सकता है तथा जहां सदस्य सोचता है कि वह महत्वपूर्ण भत्ते भले ही उसे धन संबंधी पारिश्रमिक में न मिलें। तथापि, न्यायालय और अन्य प्राधिकारियों ने समय-समय पर अपने निर्णयों में कुछ वृहद मानदण्ड बनाने की शुरुआत की है और इन्हें निम्नवत् रूप में निर्धारित किया गया है:

एक व्यक्ति को निरर्ह होने के लिए तीन चीजों को साबित करना होगा:— वह कोई पदधारी है, वह लाभ का पद है और यह भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अंतर्गत पद है (देवराव लक्ष्मण *बनाम* केशव लक्ष्मण बोरकर, एआईआर 1958 बॉम्बे, 314, कृपया भैरोलाल *बनाम* डूंगर सिदास, एआईआर 1959, राजस्थान 250 और एस. उमराव सिंह *बनाम* दरबारा सिंह, एआईआर 1968 पंजाब और हरियाणा 450 को भी **देखें**)।

निरर्हता के मामले को शुरू करने के लिए लाभ का तत्व स्वयं में पर्याप्त नहीं है। पहले यह साबित होना चाहिए कि जो धारण किया गया है, वह पद है। इसके अलावा यह भी अनिवार्य है कि उम्मीदवार को स्वयं पदधारी होना चाहिए। पद बेनामी (युगल किशोर सिन्हा *बनाम* नगेन्द्र प्रसाद यादव, एआईआर 1964 पटना 543) नहीं हो सकता।

8

'लाभ के पद' से अभिप्राय है— एक ऐसा रोजगार जिसमें पारिश्रमिक एवं परिलब्धियां मिलती हैं [विजय सिंह *बनाम* नरबदा चरण लाल, 2 ई.एल.आर. 426, रावन्ना *बनाम* कग्गूदप्पा, ए.आई.आर. 1954 एससी 653 (657) भी **देखें**] इसलिए, जब वेतन या पारिश्रमिक एक पद से जुड़े होते हैं तो वह पद तुरंत और निर्विवाद रूप से 'लाभ का पद' बन जाता है। किसी पद जिसके साथ कुछ पारिश्रमिक जुड़ा हुआ हो, पर नियुक्त किया गया व्यक्ति अयोग्य हो जाता है चाहे वह भुगतान स्वीकार करे या नहीं (भार्गव समिति रिपोर्ट)।

यह मानने के लिए कि कोई पद लाभ का पद है या नहीं, यह आवश्यक नहीं कि वहां किसी प्रकार की नियमित आय हो रही हो और न ही यह आवश्यक है कि पदधारी को वास्तव में लाभ हो रहा हो। इसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि पदधारी को इससे युक्तिसंगत लाभ होने की संभावना है (ठाकुर दाऊ सिंह *बनाम* रामकृष्ण राठौर, 4 ई.एल.आर. 34)।

इसके अतिरिक्त, 'लाभ के पद' का भाव उस पद के लिए है जो कि लाभ कमाने में सक्षम हैं या जिस पद से कोई व्यक्ति यथोचित लाभ कमाने की उम्मीद कर सकता है। वास्तविक लाभ अर्जन आवश्यक नहीं हैं। लाभ का अर्थ है—लाभ या अन्य भौतिक लाभ, और ऐसे लाभ की राशि महत्वपूर्ण नहीं है। (देवराव लक्ष्मण आनन्दे *बनाम* केशव लक्ष्मण बोरकर ऑप.सिट.)।

9

13. इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 102(1)(क) जैसे प्रावधानों को अधिनियमित करने का उद्देश्य है कि एक व्यक्ति जो कि संसद या विधायिका के लिए चुना जाता है/चुनी जाती है, को बिना किसी सरकारी दबाव के निर्भय होकर अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में स्वतंत्र होना चाहिए। कर्त्तव्य और हित के बीच संघर्ष की संभावनाओं को समाप्त करने और निर्वाचित निकायों की शुद्धता को बनाए रखने के लिए किसी स्थानीय प्राधिकरण पर सरकारी नियंत्रण के परिमाण का आकलन किया जाना चाहिए। पद पर नियुक्ति का परीक्षण यह नहीं है कि संविदा या सांविधिक उपबंधों के आधार पर नियुक्ति की गई है या नहीं, अपितु यह नियुक्त किए जाने के बाद क्या यह धारक पर अनवरत दायित्व डालती है जिसके बदले में वह लाभ कमाने की समुचित अपेक्षा रखता हो। नियुक्त करने की शक्ति, चर्चा करने की शक्ति, नियंत्रण की शक्ति और इस बारे में दिशानिर्देश देने की शक्ति कि किस प्रकार से पद के कर्त्तव्यों का निर्वहन किया जाना है और पारिश्रमिक निर्धारित करने की शक्ति, ये सभी जब किसी मामले में विद्यमान हों तो इस प्रकार नियुक्त, प्रश्नगत अधिकारी नियुक्ति करने वाले प्राधिकरण के अंतर्गत पद धारण करता है।

14. यह पाया गया है कि लाभ का पद वह पद है जो कि लाभ कमाने या वित्तीय लाभ अर्जित करने में सक्षम है। केन्द्र एवं राज्य सरकार के अंतर्गत वे पद जिनमें समान वेतन, पारिश्रमिक

या गैर-प्रतिपूरक भत्ते मिलते हैं, वे 'लाभ के पद' होते हैं। पद-नाम महत्वपूर्ण नहीं है। यदि पद द्वारा 'आर्थिक लाभ' 'प्राप्य' हो, तो यह लाभ का पद हो जाता है। (जया बच्चन *बनाम* भारत संघ, एआईआर 2006 एससी 2119)

15. विषय की आत्मनिष्ठता पर विचार करते हुए, उच्चतम न्यायालय द्वारा यह पाया गया है कि सभी निर्धारक कारकों के एक साथ पाए जाने की आवश्यकता नहीं है। कुल कारकों की अपेक्षा महत्वपूर्ण परिस्थितियां निर्णायक साबित होती हैं। एक विवेकपूर्ण निष्कर्ष पर पहुंचने में एक व्यावहारिक दृष्टिकोण सहायक होता है न कि सैद्धांतिक परीक्षणों की भरमार/(मधुकर जी.ई. पनकाकर *बनाम* जसवंत छविदास राजन, ए.आई.आर. 1976 एस.सी. 2283)।

समिति का दृष्टिकोण

16. यह निर्धारित करने के लिए कि क्या किसी व्यक्ति द्वारा धारित पद सरकार के अंतर्गत लाभ का पद है या नहीं लाभ के पदों संबंधी संयुक्त समिति भार्गव समिति (1955) द्वारा निर्धारित किए गए मुख्य सिद्धांतों और विभिन्न न्यायालयों द्वारा समय-समय पर दिए गए निर्णयों का निष्ठापूर्वक पालन कर रही है। जेसीओपी ने अपनी 10वीं रिपोर्ट (7वीं लोक सभा) जो कि 7 मई, 1984

को लोक सभा को प्रस्तुत की गई थी, में निम्नलिखित निर्देशक सिद्धांत निर्धारित किए गए हैं।

'इस प्रश्न के निर्धारण के लिए कि किसी व्यक्ति द्वारा धारित पद लाभ का पद है या नहीं, व्यापक मापदंड न्यायिक घोषणाओं में विहित किए गए हैं। यदि सरकार पद पर नियुक्ति और बर्खास्तगी एवं निष्पादन और पद के कार्यों और पारिश्रमिक और आर्थिक लाभ, चाहे मूर्त या अमूर्त पर नियंत्रण रखती है जो कि ऐसे पद को प्राप्त होते हैं, भले ही कुछ समय के लिए धारक ऐसे पारिश्रमिक या लाभ वास्तविक रूप से प्राप्त करे या न करे, ऐसा पद सरकार के अंतर्गत एक लाभ का पद माना जाना चाहिए। अन्यथा, संविधान में परिकल्पित निरर्हताओं को लागू करने का उद्देश्य निरर्थक हो जाएगा। विधायिका के किसी सदस्य को पदों की पेशकश करने में पहला मूलभूत सिद्धांत ही मार्गदर्शक सिद्धांत होना चाहिए।'

17. उपरोक्त स्थितियों को ध्यान में रखते हुए, 'लाभ के पद' संबंधी संयुक्त समिति ने समितियों, आयोगों आदि के परीक्षण के लिए निम्नलिखित मापदंड तैयार किए हैं जिससे यह तय किया जा सके कि कौन-से पद धारण करने से कोई व्यक्ति संसद का सदस्य चुने जाने अथवा संसद का सदस्य बने रहने के लिए निरर्ह हो जाता है और कौन-से पद धारण करने से निरर्ह नहीं होता है।

(एक) क्या पद धारक कोई पारिश्रमिक जैसे बैठक शुल्क, मानदेय, वेतन इत्यादि अर्थात् संसद (निरर्हता निवारण)

अधिनियम, 1959 की धारा 2(क) में परिभाषित क्षतिपूर्ति भत्ते के अतिरिक्त कोई पारिश्रमिक प्राप्त करता है।

अत:, सिद्धांत यह है कि यदि कोई सदस्य अपनी जेब से हुए वास्तविक व्यय की पूर्ति करने हेतु आवश्यकता से अधिक धन की निकासी नहीं करता है और न ही इससे उसे कोई आर्थिक लाभ होता है तो यह उसकी निरर्हता का कारण नहीं बनेगा।

(दो) क्या वह निकाय, जिसमें पद धारण किया गया है, कार्यकारी विधायी या न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करता है या धन के संवितरण की शक्तियां प्रदान करने, भूमि का आवंटन करने, लाइसेंस जारी करने आदि की शक्ति प्रदान करता है या नियुक्ति, छात्रवृत्ति का अनुदान आदि शक्तियां देता है; और

(तीन) क्या निकाय, जिसमें पद धारण किया गया है, संरक्षण के माध्यम से प्रभाव डालता है या शक्तियों का प्रयोग करता है।

यदि उपरोक्त में से कोई भी मापदंड सकारात्मक है तो प्रश्नांकित पद अयोग्य घोषित किया जा सकता है। प्रत्येक मामले को समिति द्वारा गुण-दोष और सरकार को दी गई उपयुक्त सिफारिशों के आधार पर जांचा जाता है।

13

समिति का गठन

18. लोक सभा के 10 सदस्यों और राज्य सभा के 5 सदस्यों को शामिल करके लाभ के पदों संबंधी संयुक्त समिति का गठन किया गया है। समिति प्रत्येक लोक सभा की अवधि के दौरान सरकारी प्रस्ताव पर गठित की जाती है। समिति का कार्यक्षेत्र एवं कार्य निम्नलिखित हैं:—

(एक) सभी विद्यमान समितियों और भविष्य में गठित की जाने वाली ऐसी सभी समितियों जिनकी सदस्यता संविधान के अनुच्छेद 102 के अंतर्गत संसद के किसी भी सदन के लिए चुने जाने और उसका सदस्य बने रहने के लिए किसी भी व्यक्ति को निरर्ह बना सकती है की संरचना और स्वरूप की जांच करना।

(दो) इसके द्वारा जांच की गई 'समितियों' के संबंध में सिफारिश करना कि किन पदों को निरर्ह करना चाहिए और किन पदों को निरर्ह नहीं करना चाहिए।

(तीन) संसद (निरर्हता निवारण) अधिनियम, 1959 की अनुसूची की समय-समय पर संवीक्षा करना और उक्त अनुसूची में परिवर्धन, लोप या अन्य प्रकार से किन्हीं संशोधनों की सिफारिश करना।

समिति संसद सदस्यों, भारत सरकार के मंत्रालयों, राज्य सरकारों या अन्य संस्थाओं से प्राप्त 'लाभ के पद' से संबंधित प्रश्नों की भी जांच करती है और उचित मामलों में उत्तर भी भेजती है।

19. विधि और न्याय मंत्रालय से प्रस्ताव की सूचना की प्राप्ति पर इसकी संवीक्षा की जाती है और सदस्यों की सूचना के लिए समाचार भाग-दो में प्रकाशित किया जाता है।

20. लोक सभा द्वारा प्रस्ताव को स्वीकार किए जाने के बाद, आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा लोक सभा के 10 सदस्यों के चुनाव के लिए व्यवस्था की गई। राज्य सभा को इस अनुरोध के साथ संदेश भेजा जाता है कि सभा लोक सभा की संयुक्त समिति के गठन की सिफारिश से सहमत है और राज्य सभा के पांच सदस्यों के नाम संसूचित करे जिन्हें संयुक्त समिति के लिए चुना गया है।

21. राज्य सभा से लोक सभा की सदनों की संयुक्त समिति के गठन की सिफारिश पर सहमति और संयुक्त समिति के लिए निर्वाचित राज्य सभा के सदस्यों के नामों की संसूचना संदेश प्राप्त होने और लोक सभा को सूचित करने के पश्चात् और संयुक्त समिति के लिए लोक सभा के 10 सदस्य भी निर्वाचित किए जाने

के उपरान्त समिति का सभापति अध्यक्ष द्वारा लोक सभा के सदस्यों में से नियुक्त किया जाता है।

यदि सभापति किसी कारण से कार्य करने में असमर्थ हो, तो अध्यक्ष उसके स्थान पर अन्य सभापति नियुक्त कर सकेगा/सकेगी।

यदि सभापति किसी बैठक से अनुपस्थित हो, तो समिति किसी अन्य सदस्य को उस बैठक में सभापति का कार्य करने के लिए चुनती है। (नियम 258)

22. समिति अपने गठन के बाद लोक सभा के विघटन तक कार्य करती है।

समिति का कार्यकरण

मंत्रालयों/राज्य सरकारों इत्यादि से सामग्री/सूचना का मंगाया जाना

23. लाभ के पद संबंधी संयुक्त समिति के गठन के बाद, भारत सरकार के सभी मंत्रालयों और राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों के मुख्य सचिवों को पत्र भेजा जाता है कि वे लाभ के पद संबंधी संयुक्त समिति द्वारा अभी तक जांच न की गई और भविष्य में गठित की जाने वाली समितियों, आयोगों, बोर्डों आदि का विवरण भेजें। उनसे यह भी अनुरोध किया जाता है कि वे ऐसी वर्तमान

समितियों, आयोगों, बोर्डों आदि के बारे में भी सूचना प्रस्तुत करें, जिनकी लाभ के पद संबंधी संयुक्त समिति द्वारा पहले ही जांच की जा चुकी है, किंतु जिनके गठन (सदस्यों को यात्रा भत्ता/दैनिक भत्ता आदि के भुगतान सहित) में समिति द्वारा पूर्व में की गई जांच के बाद उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं।

सरकार द्वारा नियुक्त समितियों/आयोगों की जांच और समिति के लिए ज्ञापन तैयार करना

24. मंत्रालयों आदि से प्राप्त सूचना की जांच की जाती है और ज्ञापन के रूप में संयुक्त समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है जिसे सभापति के अनुमोदन से समिति के सदस्यों में परिचालित किया जाता है। समिति द्वारा समय-समय पर होने वाली बैठकों में ज्ञापनों पर विचार किया जाता है।

25. समिति का कार्यकरण लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियम की संसदीय समिति से संबंधित सामान्य नियमों (जैसे नियम 253 से 286) से शासित होता है। ये नियम पुन: लोक सभा अध्यक्ष को नियम 389 और अन्य नियमों के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का उसके द्वारा प्रयोग करते हुए जारी किए गए निदेशों से अनुपूरित होते हैं।

26. समिति ने अपने आंतरिक काम-काज के लिए विस्तृत नियम भी बनाए हैं। ये नियम लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियम के प्रावधानों को अनुपूरित करते हैं।

लोक सभा अध्यक्ष द्वारा समिति को निर्दिष्ट विषय

27. केन्द्र सरकार के मंत्रालयों/राज्य सरकारों आदि के द्वारा गठित समितियों/बोर्डों/आयोगों की जांच के अतिरिक्त समिति अध्यक्ष द्वारा समय-समय पर इसे निर्दिष्ट विषयों की भी जांच करती है।

28. समिति संसद सदस्यों से 'लाभ के पद' के संबंध में प्राप्त विभिन्न प्रश्नों की भी जांच करती है और उचित मामलों में अपना मत अभिव्यक्त करती है।

उप-समितियों की नियुक्ति

29. समिति किन्हीं ऐसे विषयों की, जो उसे निर्दिष्ट किए जाएं, जांच करने के लिए एक या अधिक उप-समितियां नियुक्त कर सकेगी, जिसमें से प्रत्येक को अविभक्त समिति की शक्तियां प्राप्त होंगी और ऐसी उप-समितियों के प्रतिवेदन संपूर्ण समिति के प्रतिवेदन समझे जाएंगे, यदि वे संपूर्ण समिति की किसी एक बैठक में अनुमोदित हो जाएं।

उप-समिति को निर्देश के आदेश में अनुसंधान के विषय या विषयों का स्पष्ट उल्लेख किया जाएगा। उप-समिति के प्रतिवेदन पर संपूर्ण समिति द्वारा विचार किया जाएगा। (नियम 263)

मंत्रालयों/विभागों से सामग्री/सूचना मंगाने की शक्ति

30. समिति को व्यक्तियों को बुलाने तथा पत्रों और अभिलेखों को मंगाने का अधिकार है।

यदि कोई प्रश्न उठता है, कि किसी व्यक्ति या साक्ष्य या किसी दस्तावेज का पेश किया जाना समिति के प्रयोजनों के लिए संगत है या नहीं तो वह प्रश्न अध्यक्ष को निर्दिष्ट किया जाएगा जिसका विनिश्चय अंतिम होगा। तथापि, सरकार किसी दस्तावेज को पेश करने से इस आधार पर इंकार कर सकती है कि इसका प्रकट किया जाना राज्य की सुरक्षा या हित के प्रतिकूल होगा। (नियम 270)